सहयोग श्रेष्ठ मानव-जीवन का आधार

सहयोग देना एवं सहयोग लेना जीवन चक्र का विधान है। इस विधान के अनुरूप आत्मा एवं प्रकृति दोनों के परस्पर सहयोग से संसार में जीवन चक्र चलता है। नीति शास्त्रों में भी कहा गया है -

जातस्य नदी तीरे तस्यपि, तृणस्य जन्म सफल्यम्

यत् सलिल मज्जनाकुल, जन हस्तालंबनं भवति।

अर्थात् नदी किनारे जन्म लेने वाले तृण का जीवन सफल तब ही कहा जायेगा जब वह उस नदी प्रवाह में डूबने वाले व्याकुल मनुष्य के हाथ का सहारा बने क्योंकि डूबते हुए मनुष्य के लिए तिनके का सहारा ही जीवन बचाने का साधन बन जाता है।

इसी प्रकार वर्तमान समय विषय सागर में डूबे हुए मनुष्य को थोड़े से 'सहयोग' की आवश्यकता है। वह सहयोग न केवल उसके जीवन का कल्याण करेगा लेकिन इस दु:खी अशांत संसार को परिवर्तन करने में भी मदद करेगा। मनुष्य का यह अमूल्य जीवन है ही दूसरों के सहयोग के लिए। दूसरों के कल्याण के लिए अपने संकल्प, बोल एवं कर्म का सहयोग देना ही सच्चा मानव धर्म है। एक-दूसरे के सहयोग से मनुष्य शारीरिक, मानसिक, पारिवारिक एवं सामाजिक आदि सर्व समस्याओं का समाधान कर अपने जीवन को निर्विघ्न बना सकता है। अगर मानव सहयोग के इस महत्व को जान जीवन में आध्यात्मिक ज्योति प्रज्ज्वलित कर कर्म करे तो वह दु:ख-अशांति, कलह-कलेश वाली दुनिया को सदा के लिए सुख-शांति-आनन्द-प्रेम सम्पन्न, दैवी, सुखदाई संसार बना सकता है। जब-जब मानव धर्म-भ्रष्ट एवं कर्म-भ्रष्ट होकर मानवता की प्रगति में समस्या रूप बना है तब जिन आत्माओं ने अपने त्याग एवं बलिदान से समाज में आध्यात्मिक भावना, धार्मिक विचारधारा एवं नैतिकता के मूल्य बोध को सम्पूर्ण विलुप्त होने से बचाने में अपना सहयोग दिया, उन श्रेष्ठ धर्म-आत्माओं, महात्माओं को मानवता के इतिहास ने आज तक अपने विशाल दिल में अमरत्व का स्थान दिया है, उनसे विचारों में भिन्नता होते हुए भी सदा उनके सहयोग को याद कर अपने श्रद्धा-सुमन अर्पित करता है।

लेकिन मानव जीवन को सम्पूर्ण सुखी बनाने एवं दु:खी अशांत संसार को सुखमय संसार बनाने में ईश्वरीय सत्ता का सहयोग अविस्मरणीय है। मानवता को धर्म एवं कर्म की शिक्षा देने वाली सर्व-शास्त्र-शिरोमणि गीता इसका यादगार है। मंदिरों में शिवलिंग, भक्ति में स्मरण होने वाला 'ओम् नम: शिवाय' मंत्र, हमें उस सत्य कल्याणकारी ईश्वर पिता की याद दिलाता है जो जड़जड़ीभूत अवस्था को प्राप्त होने वाले सच्चे सनातन मानवधर्म को पुन: नई दिशा देकर सर्व आत्माओं को अपने 'स्वधर्म' में स्थित कराता है तथा नैतिक एवं आध्यात्मिक ज्योति को पुनर्जागृत करने के लिए आत्माओं में ज्ञान घृत डालता है। श्रेष्ठ जीवन बनाने के लिए ज्ञान एवं शक्ति का साहयोग देने के साथ-साथ वह स्वयं प्रत्यक्ष सेवाधारी बन सहयोग देकर सहयोग लेने की विधि सिखाता है जिस विधि से यह पंकिल (कीचड़) समान दुनिया कमल समान न्यारी, प्यारी, सुंदर एवं सुखदायी स्वर्ग बन जाती है।

सहयोग शक्ति को व्यवहार में लाने के लिए सदा सर्व के प्रति कल्याणकारी दृष्टि, बेहद की वृत्ति एवं जीवन में त्याग, तपस्या और निष्काम सेवा-भावना होना जरूरी है। 'भ्रातृत्व भावनाश या वसुद्यैव कुटुम्बकम् की भावना' से सम-दृष्टि धारण कर सर्व को, समभाव से अपना सहयोग दे सकते हैं। इसलिए सबसे पहले आध्यात्मिक शक्ति का विकास होना आवश्यक है जिसकी सहायता से हम अपनी कर्मइन्द्रियों एवं आत्मा की सूक्ष्म शक्तियों को नियंत्रित कर सकते हैं और अपनी सहयोग शक्ति को सही दिशा में क्रियान्वित कर सकते हैं।

मानवता को सहयोग देने में मनुष्य की विशेषतायें एवं कलायें भी विशेष भूमिका निभाती हैं क्योंकि मनुष्य आदिकाल से कलाप्रिय रहा है। उस अनुरूप महान चित्रकार एवं विचित्र कलाकार परमात्मा ने भी हर मानव के अंदर कोई न कोई विशेष गुण या विशेषतायें भर दी हैं। मनुष्य सृष्टि रूपी चैतन्य बगीचे में यह सब कलायें गीतकार, संगीतकार, चित्रकार, कवि,

सदा सर्व के प्रति कल्याणकारी दृष्टि, बेहद की वृत्ति एवं जीवन में त्याग, तपस्या और निष्काम सेवा-भावना वाला ही सहयोगी व्यवहार का आधार।

लेखक, साहित्यकार आदि अनेक प्रकार के रूप, रंग और सुगन्ध से अपनी-अपनी शोभा बढ़ाते हैं। कला के प्रति अभिरूचि होने के कारण इस माध्यम से मिले हुए हर संदेश या शिक्षा को मनुष्य-मात्र अपने जीवन के साथ तुलना करता रहता है। इसलिए इन सब कलाओं द्वारा मानव के मन में आध्यात्मिक चेतना जागृत करना ही कलाओं द्वारा सहयोगी बनना है जिससे जीवन सुखमय बन जाता और दूसरों में छिपी हुई कलाओं को विकसित करने में सहायक बन जाता है। इसलिए अपनी कलाओं को ईश्वरीय सेवा में समर्पित कर सार्थक बनाने के साथ दूसरों के जीवन के अंधकार को मिटाने के निमित्त बनो। अगर हर एक आत्मा अपनी कला एवं विशेषताओं का सहयोग देवे तो आने वाला विश्व सर्व विशेषताओं पूर्ण, सर्वगुण सम्पन्न और सर्व कलाओं से परिपूर्ण हो जायेगा जिसको 'सुखमय संसार' या 'सतयुग' कहते हैं।

सहयोग देने या लेने का आधार कोई ना कोई शक्ति होती है जिस शक्ति के बिना सहयोग का अस्तित्व नहीं है क्योंकि व्यक्तिगत या समष्ठीगत जीवन में कर्म करने के लिए हमें किसी न किसी शक्ति की आवश्यकता होती है। यह शक्ति तन-मन-धन, मंसा-वाचा-कर्मणा या समय सम्बन्ध और सम्पर्क की हो सकती है। इन सभी शक्तियों के सहयोग की हमें जीवन के हर क्षेत्र में जरूरत पड़ती है। अपने प्रति या दूसरों के प्रति कार्य में सहायक बनने वाली इन शक्तियों को स्व तथा अन्य के जीवन में श्रेष्ठता लाने के कार्य में लगाकर विश्व-परिवर्तन के कार्य में सहयोगी बनना ही शक्तियों द्वारा ईश्वरीय सेवा करना है। इन सब शक्तियों से सहयोगी बनना अर्थात् शक्तियों में वृद्धि करना। ''धन दिये धन ना खुटे'' - ये ईश्वरीय विधान है। समय पर हम अगर अपनी इन शक्तियों से ईश्वरीय सेवा में सहयोगी बनते हैं तो आने वाले सुखमय संसार में हमें कंचन काया, निर्मल मन, अपार धन, प्रेम भरा सम्बन्ध-सम्पर्क 21 जन्मों के लिए अधिकार के रूप में मिलता है। 'एक देना - लाख पाना' - इसलिए तो गायन है। अत: अपनी सर्व शक्तियों सहित ईश्वरीय सेवा में सहयोगी बन श्रेष्ठ भाग्य को प्राप्त करो।

किसी भी प्रकार का सहयोग सार्थक तब होता है जब सहयोग देने वाले और सहयोग लेने वाले के साथ-साथ अन्य आत्माओं की भावनायें भी उसके प्रति शुभ हों। इसलिए शुभ भावना एवं शुभ कामना का सहयोग अनिवार्य है। अत: अन्य सर्व सहयोग के साथ-साथ सदा स्व प्रति तथा विश्व प्रति अपनी शुभ-भावना एवं शुभ-कामना का सहयोग देना ही मानवता को अपना महान सहयोग प्रदान करना है। स्थूल सहयोग न होने पर भी ये सहयोग कार्य करने वालों के प्रति वरदान या आशीर्वाद के रूप में सफलता दिलाता है। यह सूक्ष्म सहयोग वातावरण को शुद्ध बनाता है और दूसरों के मन में उमंग-उत्साह बढ़ाता है। समाज में एकता एवं संगठन में शक्ति भरने में शुभ-भावना एवं कामना का सहयोग विशेष कार्य करता है, नहीं तो व्यक्ति विघ्न रूप बन जाता है। क्योंकि भावना अनुकूल संकल्प और संकल्प प्रमाण कर्म होता है। अतएव विश्व-परिवर्तन तथा मानवता के कल्याण हेतु सदा अपनी शुभ-भावना एवं शुभ-कामनाओं के द्वारा सहयोगी बनो। नि:स्वार्थ भाव एवं निष्काम भावना ही शुभ-कामना एवं शुभ-भावना द्वारा सहयोगी बनने में मुख्य सहायक होती है।

अहम्, वहम और रहम

प्राय: सभी मनुष्यों में यह तीनों बातें किसी न किसी हद तक पाई ही जाती है। किसी में किसी एक की अधिकता है तो किसी में दूसरे की। अहम् और वहम मनुष्य के जीवन पर बुरा असर डालते हैं। और रहम उसे भावुक बनाकर उसके चरित्र निर्माण में मुख्य भूमिका निभाता है। हम यहां पर तीनों की संक्षिप्त व्याख्या करेंगे।

अहम् प्रत्येक मनुष्य में गहराइयों तक छुपा हुआ है। प्राय: अनेक मनुष्य अपने सूक्ष्म अहम् को नहीं पहचानते। उनका मोटा अहम् दूसरों को दिखाई देता है। अहम् मनुष्य के चरित्र रूपी अमृत में जहर के समान है, जो मनुष्य जीवन को विषैला दु:खी और अशांत बना देता है।

संसार में रहते हुए किसी भी कार्य को करने में अहंकारी मनुष्य को दूसरों के असहयोग का सामना करना पड़ता है। प्राय: लोग उससे दूर ही रहना चाहते हैं और उसके कार्यों में सहयोग नहीं करते। इसलिए उसका अहम् उसे ही कष्ट देता है। परेशान होकर वह चिल्लाता है व निराश होता है कि उसे कोई भी प्यार नहीं करता, उसे कोई भी मदद नहीं करता। अहंकारी मनुष्य की तुलना लोगों ने मुर्दे से की है, जैसे मुर्दा अकड़ जाता है, वैसे ही अहंकारी मनुष्य भी अकड़ा रहता है, वह झुकना नहीं जानता, इसलिए वह किसी को झुका भी नहीं सकता।

अहम् संगठन की शक्ति को नष्ट भ्रष्ट कर देता है। उसके रूखे व्यवहार के कारण कोई भी उसके साथ मिलकर काम करना नहीं चाहता। राजयोग के अभ्यास में अहम् एक दीवार की तरह है। अगर कोई ज्ञानी या योगी आत्मा अहंकार के वश है तो उसे कभी भी अपने जीवन में सफलता नहीं मिलती इसलिए ज्ञान की अग्नि में अहंकार को गर्म करके नर्म करना चाहिए। ज्ञान के द्वारा मनुष्य को अपने विचारों को सरल करना चाहिए और योग अभ्यास द्वारा निरंतर आत्मिक स्थिति के अभ्यास के द्वारा अहम् को समाप्त कर देना चाहिए।

मनुष्य को न तो अपनी कलाओं का अहंकार होना चाहिए, न अपने धन का, न अपनी शिक्षा का। अहंकार आते ही पतन प्रारंभ हो जाता है। अत: जीवन में निरंतर उन्नति करने के लिए अहम् को समाप्त करना अति आवश्यक है। अहंकारी मनुष्य कभी किसी को सुख नहीं दे पाता। इसलिए उसे भी कभी सुख नहीं मिलता।

इसी प्रकार वहम् मनुष्य को वास्तविकता से दूर कल्पनाओं के लोक में ले चलता है। वहमी मनुष्य कभी भी किसी पर विश्वास नहीं करता। संशय बुद्धि हुआ ऐसा मनुष्य भी सदा ही परेशान रहता है - यह सोच-सोचकर कि पता नहीं दूसरे लोग मेरे बारे में क्या सोचते होंगे। जब वह किन्हीं दो व्यक्तियों को बातें करते देखता है तो पहला संदेह उसका यही होता है कि कहीं वे मेरे ही बारे में तो बातें नहीं कर रहे, कहीं वे मेरी ही तो निंदा नहीं कर रहे।

ऐसा कल्पनाओं के लोक में विचरण करने वाला मनुष्य सदा ही कल्पना करता रहता है। उसे नींद में भी चैन नहीं भासता, उसका मन भी सदा ही अस्थिर रहता है और उसे जीवन भर संतुष्टि भी नहीं होती। इस पर एक कहानी अति सुंदर है -

एक बार एक व्यक्ति बहुत बीमार हुआ। लोगों ने कहा यह तो मर गया। उस व्यक्ति ने अर्धचेतन अवस्था में यह सुना और मान लिया कि वह मर चुका है। पुन: जब उसमें चेतना आई तो लोगों ने कहा कि इसे डॉक्टर के पास ले चलो। उसने कहा मैं तो मर गया हूँ। मुझे वहां क्यों ले जाते हो? परन्तु उसे डॉक्टर के पास ले जाया गया। वहां जब उसका खून परीक्षण के लिए निकाला तो उसने कहा कि अब मुझे पता चला कि मरे हुए मनुष्य में भी खून होता है। डॉक्टर ने उसे बहुत समझाया कि तुम अभी जीवित हो, परंतु उसे इतना वहम हो गया कि वह यही कहता रहा कि मैं तो मर चुका हूँ।

तो हम देख सकते हैं कि वह वहमी मनुष्य स्वयं की वास्तविकता भी वहम कर लेता है, उसके विचारों का आधार दूसरे ही बने रहते हैं। और वह सत्य को स्वीकार करने में कितनी कठिनाई महसूस करता है।

...शेष पृष्ठ 8 पर